मारवाड़ के इतिहास में धायभाई जगन्नाथः शिलालेखीय साक्ष्य के आलोक में पुनर्मूल्यांकन

डॉ. राजेन्द्र कुमार

इतिहास लेखन के साहित्यिक एवं पुरातात्त्विक स्त्रोतों में निःसंदेह पुरातात्त्विक स्त्रोतों को अधिक सटीक एवं प्रामाणिक माना जाता है। तथापि, जब पुरातात्त्विक स्त्रोतों की अनुपलब्धता होती है, तब साहित्यिक स्त्रोतों को आधार सामग्री के रूप में स्वीकार किया जाता है। किंतु यदि पुरातात्त्विक एवं पुरालेखीय सामग्री उपलब्ध हो, तो साहित्यिक स्त्रोतों में वर्णित तथ्यों की पुष्टि करना आवश्यक हो जाता है।

राजस्थान के मध्यकाल एवं पूर्व-आधुनिक काल के इतिहास को जानने के प्रमुख साहित्यिक स्त्रोतों में *ख्यात* साहित्य का विशेष स्थान है। ख्यातें मूलतः पुरालेखीय दस्तावेज नहीं हैं, अपितु वे समकालीन इतिहासकारों द्वारा उपलब्ध तथ्यों के आधार पर भूतकाल को पुनः संजोने का प्रयास हैं। अतः इनमें वर्णित तथ्यों के संदर्भ में यदि अन्य पुरालेखीय या पुरातात्त्विक साक्ष्य उपलब्ध हों, तो उनकी जाँच-परख अवश्य करनी चाहिए। अधिकांशतः इनमें उल्लिखित तथ्य सटीक पाए जाते हैं, किंतु यह आवश्यक नहीं कि वे सदैव प्रमाणिक ही हों। इसलिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इतिहास लेखन में अन्य स्त्रोतों के साथ उनकी प्रामाणिकता की पुष्टि करना अथवा त्रुटियों का परिशोधन करना आवश्यक हो जाता है।

प्रस्तुत आलेख **मारवाड़ के इतिहास में धायभाई जगन्नाथ** में इसी सैद्धांतिक दृष्टिकोण के आधार पर मारवाड़ राज्य की विभिन्न ख्यातों में उल्लिखित धायभाई जगन्नाथ की मृत्यु से संबंधित विवरण की जाँच उपलब्ध पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर की जाएगी, तथा प्रमाणिक इतिहास के लिए यथासंभव सटीक तथ्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाएगा।

इस आलेख के लेखन का मुख्य आधार एक शिलालेख है, जो 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध काल से सम्बन्ध रखता है, और वर्तमान में तत्कालीन मारवाड़ रियासत के मेड़ता परगने के रूण गाँव में स्थित एक छतरी में प्रतिष्ठापित है। मौलिक व अप्रकाशित यह शिलालेख राजस्थान के अनेक स्थानों से अवाप्त विभिन्न प्रकार के शिलालेखों से अनेक मायनों में विशिष्टता लिए हुए है। यह शिलालेख मारवाड़

 ISSN 3048-5266

शासक महाराजा विजयसिंह (1752–1793 ई.) के धायभाई सांखला ठाकुर जगनाथ उर्फ़ जग्गू के मृत्यु स्मारक के रूप में स्थापित है, जिसकी मृत्यु 1764 ई. में हुई थी।

यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि धायभाई जगन्नाथ कौन था और मारवाड़ के इतिहास में उसकी क्या भूमिका रही ?

धायभाई जगन्नाथ, सांखला राजपूत कुल में जन्मा एवं मेड़ता के निकट रुण नामक गाँव का रहने वाला था, जिसके पिता बद्रीदास एवं दादा सूरजमल थे। उसकी माता मारवाड़ के महाराजा विजय सिंह की धाय मां थी। परिणामत: जगन्नाथ, महाराजा विजय सिंह का धाय भाई हुआ और इसी नाम से कालांतर में मारवाड़ के इतिहास में उसकी पहचान स्थापित हुई।

महाराजा विजय सिंह (1753–1793 ई.), अपने पिता बख्त सिंह की मृत्यु के बाद मारवाड़ के राजसिंहासन पर विराजमान हुए। परन्तु उनका सिंहासन काँटों से भरा था, राजगद्दी पर बैठते ही पूर्व महाराजा अभयसिंह के दूसरे पुत्र राम सिंह ने मारवाड़ के उत्तराधिकारी के रूप में चुनौती पेश की। यद्यपि वह उनके पिता बख्तसिंह के साथ भी गद्दी प्राप्ति के लिए संघर्षरत था। फलत: विजय सिंह के लिए मारवाड़ का स्वतन्त्र एवं निष्कंटक शासक बनने की राह अब आसान नहीं थी। मारवाड़ के सरदार दो खेमों में बंट गये। यद्यपि राम सिंह के लिए भी मारवाड़ की गद्दी प्राप्त करना सरल कार्य नहीं था। अत: अपनी मनोरथ की पूर्ति हेतु उसने मराठों को मारवाड़ में आमंत्रित किया। मराठों के मारवाड़ में इस आगमन के साथ मारवाड़ के इतिहास में एक नए अध्याय की शुरुआत होती है, और यह अध्याय 1818 ई. में जोधपुर–ब्रिटिश सहायक संधि के साथ समाप्त होता है।

इस संघर्ष के नए स्वरूप की शुरूआत होती है 15 सितंबर 1754 ई. को, जब महाराजा विजयसिंह, बीकानेर महाराजा गजसिंह तथा किशनगढ़ महाराजा बहादुर सिंह की संयुक्त सेना एवं राम सिंह तथा उसके सहयोगी मराठों के बीच गंगारडा नामक स्थान पर भयंकर युद्ध होता है, जिसमें महाराज विजयसिंह की पराजय हुई। इस युद्ध में विजयसिंह की अधिकांश सेना समाप्त हो गई थी[1] एवं वह युद्ध मैदान से निकलकर मेड़ता आ गए। परंतु प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण शीघ्र ही मेड़ता से निकलकर नागौर आना पड़ा।[2] 31 अक्टूबर 1754 ई. को राम सिंह ने मराठों को लेकर मेड़ता को घेर लिया। दूसरी ओर मराठा जनकूजी ने 50000 की

सेना से जोधपुर को घेर लिया। हालाँकि लम्बे समय तक घेरा डाले रखने के बाद 2 फरवरी 1756 ई. को मराठों से विजय सिंह की सुलह हो गई[3] और अजमेर तथा 51 लाख रुपया मराठों को देना स्वीकार हुआ।[4]

मारवाड़ के उत्तराधिकार विवाद के अंतर्गत इस प्रथम युद्ध ने महाराजा विजयसिंह के समक्ष मराठों के रूप में एक नई चुनौती पेश की जिसने मारवाड़ की सेना में नए परिवर्तन के लिए विजयसिंह को उद्यत किया। तत्कालीन मुसाहिब गोरधन खीची एवं धायभाई जगन्नाथ ने विजयसिंह के इस कार्य में उनकी बहुत सहायता की थी।[5] परिणामत: विजयसिंह ने मारवाड़ में स्थायी सेना की नींव रख दी। मारवाड़ की मुख्य सेना में राठौड़ तथा गनायत राजपूत ही प्रमुख रूप से थे।[6] परन्तु जब राज्य को अधिक सेना की आवश्यकता पड़ती थी तब सिंधी, पूरबियों, तथा रूहेलों को भी सेना में भर्ती किया जाता था।[7] विजयसिंह के मुसाहिब[8] गोरधन खीची एवं धायभाई की सलाह पर पहली बार इन गैर-राजपूतों को मारवाड़ की सेना में भर्ती किया गया[9], इन्हें राज्य द्वारा नकद वेतन दिया जाता था। ये बंदूकधारी होते थे तथा तोपखाने का संचालन भी कुशलता के साथ करते थे।[10] कालान्तर में इस स्थायी सेना में रूहेल, अफगान, सिंधी तथा पूरबियों की भर्ती बड़े स्तर पर की जाने लगी।[11]

गंगारड़ा के युद्ध के बाद 2 वर्ष तक मारवाड़ में स्थिरता कायम रही परन्तु 1756 ई. में राम सिंह जब जयपुर गया तो पीछे से विजय सिंह ने जालौर, सोजत व मेड़ता के किलों पर अपना अधिकार कर लिया। परंतु जैसे ही यह खबर राम सिंह को लगी, उसके पक्ष में पुन: मराठा सेना खानूजी जादव के नेतृत्व में मारवाड़ आ गई। विजय सिंह भी मराठों के साथ संघर्षरत रहे परंतु मारवाड़ के कुछ सरदार मराठों से मिल गए जिससे मारवाड़ राज्य को बहुत हानि हुई। परिणामस्वरूप जालौर मराठों ने ले लिया तथा मेड़ता पर राम सिंह का अधिकार हो गया।[12]

महाराजा विजय सिंह के समक्ष उपस्थित इन विकट परिस्थितियों का लाभ उठाकर जालिमसिंह (छोटी खाटू) तथा नारणोत हठी सिंह (मगरासर) तथा डीडवाना के निकट शेखावत आदि जागीरदारों ने राज्य में उपद्रव मचाया तब धायभाई जग्गू को इन सरदारों के दमन हेतु नियुक्त किया गया। जग्गू ने जोधपुर से 5000 की सेना लेकर खाटू, झाडोद व मगरासर पर चढ़ाई की एवं यहाँ के जागीरदारों को दण्डित किया। तत्पश्चात पुन: जोधपुर लौट आया। इससे जोधपुर की राजनीति में धायभाई जग्गू का प्रभाव बहुत बढ़ गया। यहाँ तक कि जोधपुर राज्य के ठिकानेदार

भी उससे भय खाने लगे।[13] परिणामत: पोकरण का ठाकुर देवी सिंह, आसोप का ठाकुर छत्र सिंह तथा रास का ठाकुर केसरी सिंह तथा निबाज का ठाकुर दौलत सिंह महाराजा विजय सिंह से स्वामी आत्माराम तथा धायभाई जग्गू के राज्य पर प्रभाव को लेकर रुष्ट हो गए तथा मगरूर भी हो गए। महाराजा विजयसिंह के बुलाने पर भी दरबार में उपस्थित नहीं हुए।[14] तब महाराजा ने धायभाई को उन्हें मनाने के लिए भेजा पर वह उचित आदर-सत्कार न मिलने पर वहां से लौट आया। फिर महाराजा ने जोधा रघुनाथसिंह, चांपावत सूरतसिंह एवं सिंघवी फतेहचंद को पुन: उनके पास भेजा परन्तु वे भी उन्हें लाने में असफल रहें।

इसी दौरान 2 फरवरी 1760 ई. को विजय सिंह के गुरु स्वामी आत्माराम का देहांत हो गया, तब गोवर्धन खीची व धायभाई जग्गू ने ठाकुरों का दंभ तोड़ने के लिए एक योजना बनाई और इसी की क्रियान्विति स्वरूप जग्गू ने ठाकुरों को सन्देश भिजवाया कि आत्माराम जी के स्वर्गवासी होने से महाराजा बहुत दु:खी है तो आपको सांत्वना देने के लिए आना चाहिए। प्रत्युत्तरस्वरूप चारों सरदार जोधपुर पहुंचे, वहां योजनाबद्ध तरीके से उन्हें किले में कैद कर लिया गया जिनमें पोकरण ठाकुर देवी सिंह व आसोप ठाकुर छत्र सिंह क्रमश: 6 दिन व 1 महीने बाद कैद में ही मर गए जबकि निबाज ठाकुर दौलत सिंह को बच्चा समझ कर मुक्त कर दिया तथापि रास ठाकुर केसरीसिंह भी 2 वर्ष कैद में रहने के बाद मर गया।[15] इस घटना ने राज्य के छोटे-छोटे सरदारों को भी स्तब्ध कर दिया और महाराजा विजयसिंह पर धायभाई के प्रभाव को समाप्त करने के लिए उन्हें विभिन्न षड्यंत्रों में संलग्न कर दिया।

पोकरण ठाकुर देवीसिंह की इस प्रकार हत्या से आक्रोशित होकर उसके पुत्र सबल सिंह चांपावत ने मारवाड़ में उपद्रव फैलाया। इन परिस्थितियों से निपटने के लिए महाराजा विजय सिंह ने मेड़ता पर आक्रमण किया तभी राम सिंह ने राठौड़ सरदारों के साथ मेड़ता को घेर लिया परन्तु उसी समय धायभाई जग्गू के पाली से लौट आने से राम सिंह वहां से भेरुन्दा भाग गया और उसके पक्ष वाले कई सरदार वापस अपने ठिकानों में लौट गए और परबतसर, खैरवा, बोरुन्दा, राहण के सरदार जग्गू से आ मिले जिससे विजय सिंह की शक्ति और बढ़ गयी। मारवाड़ की सेना के बड़े अधिपति पंचोली रामकरण, जोशी बालू आदि भी उसी के आदेश से सैन्य अभियान करने लगे[16] और इसका श्रेय सीधा सा धायभाई जग्गू को जाता था। परिणामत: जग्गू का कद मारवाड़ की राजनीति में और ऊँचा हो गया।

यही वह समय था जब धायभाई अपनी प्रसिद्धि के नशे में मदहोश था। धायभाई ने मेड़ता के एक सेठ की पुत्री अनूपराय को अपनी खवास (उपपत्नी) बना लिया था और उसे नागौर में अपनी हवेली में रखा, जहाँ उस पर हर ऐशो-आराम लुटाये गए। साथ ही नागौर की गायणियों से भी उसके अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित हो गए थे।[17] यह अलग बात है कि उसकी राज्यभक्ति में कोई कमी नहीं आई थी और वह महाराजा विजय सिंह की विजय पताका पूरे मारवाड़ में फहराने के लिए अंतिम समय तक प्रयत्नरत था।

इसी क्रम में, 1761 में धायभाई के आदेशानुसार जोशी बालू ने राजकीय सेना लेकर राज्य के इधर-उधर के बाकी जागीरदारों को दबाया और उनसे जुर्माना वसूल किया। वर्ष 1762 के प्रारंभ में उसने अजमेर को घेर लिया परंतु महादजी सिंधिया के आ जाने से जोशी को मेड़ता लौटना पड़ा। अंत में सिंधिया को 9 लाख रुपए जोधपुर से मिल जाने से वह लौट गया। कुछ दिन बाद बागियों ने पहाड़ों से रायपुर की तरफ लौटकर मारवाड़ में फिर लूटपाट शुरू की। इस पर जगन्नाथ ने सबसे पहले उनके मुखिया चांपावत सबल सिंह की जागीर 'पाली' पर चढ़ाई कर उस पर अधिकार कर लिया तत्पश्चात् रायपुर, निबाज, थांवला, भकरी तथा गूलर आदि की तरफ जाकर शेष बागी सरदारों का दमन किया। इससे मारवाड़ का उपद्रव बहुत कुछ शांत हो गया। जगन्नाथ के वीरतापूर्ण कार्यों से महाराजा विजय सिंह बहुत प्रसन्न हुए और इसी से राज्य में उसका बड़ा सम्मान था। परंतु इसी दौरान बालू जोशी की शिकायत[18] से महाराजा ने उसका *रिसाला* (सेना) उससे वापस ले लिया जिससे उसके सम्मान को धक्का लगा।[19] संभवत: इसी आघात की वजह से धायभाई की मृत्यु हुई थी।

मारवाड़ राज्य का इतिहास लिखने वाले तत्कालीन ख्यातकारों तथा अन्य विद्वानों ने इस घटना का उल्लेख भी अपने ग्रंथों में किया है। उदाहरणार्थ जी.एच. ओझा, *जोधपुर राज्य का इतिहास* ग्रन्थ में लिखते है कि धायभाई जगन्नाथ की मृत्यु वि.सं. 1821 के श्रावण मास अर्थात जुलाई 1764 में हुई थी।[20] इसी तथ्य का उल्लेख *जोधपुर राज्य की ख्यात*[21], *मारवाड़ का इतिहास*[22] एवं *वीर विनोद*[23] में भी किया गया है। वर्तमान में मारवाड़ (जोधपुर) का इतिहास लिखने वाले विद्वानों ने मारवाड़ की ख्यातों एवं परवर्ती इतिहास लेखन को ही प्रमाणिक मानते हुए जगन्नाथ की मृत्यु श्रावण माह में होना लिखा है जबकि मारवाड़ री ख्यात में आषाढ़ माह में मृत्यु होना

लिखा है[24], जो इस प्रकार से है– *आसाड़ में मेड़ते धाय भाई काल कीनो।*

इस विषय पर महत्वपूर्ण एवं प्रमाणिक जानकारी देने के लिए मैंने एक शिलालेख का उपयोग किया है, जो कि मेड़ता के समीप रूण गाँव में धायभाई जगन्नाथ के मृत्यु स्मारक पर प्रतिष्ठापित है। यह शिलालेख धायभाई जगन्नाथ के जीवन के अनेक अनछुए पहलुओं पर प्रकाश डालता है।



मूल पाठ–

समत १८२१ रा साके १६८६ रा प्रवर्तमाने असाढ़ सुद १२ भोमवार घटी ३१ पल २८ सांखला ठाकुरा श्री धायभाई जी श्री जगनाथजी बदरीदास सूरजमलोत मेड़ते देवगत प्राप्त हुवा पाछेमा सती हुई जोधपुर में १ ठुकराणी चवाणजी १ खवास अनोपरायजी नागौर में गायणीयाँ ४ गुणरूपजी रूपरसजी सुग्यानरायजी चंद सोभाजी पड़दायत १ गुणभानीजी सं. १८५४ रा फागुण वद ५ सोम प्रतिष्ठा कीवी छै।।

इस शिलालेख में जगन्नाथ की मृत्यु के समय का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसमें न केवल तिथि और वार का ही उल्लेख है बल्कि घटि और पल का भी उल्लेख हुआ है, जो कि राजस्थान से प्राप्य सती एवं झुंझार शिलालेखों में अब तक कहीं नहीं देखा गया है।

उक्त शिलालेख में उसकी मृत्यु की तिथि आषाढ़ माह की शुक्ल द्वादसी, मंगलवार स्पष्टत: उल्लेखित है। इसके अनुसार 10 जुलाई 1764 के दिन मेड़ता में जगन्नाथ की मृत्यु हुई थी। यह शिलालेख ही एकमात्र स्रोत है, जो उसकी मृत्यु की सही तिथि ही नहीं बल्कि सटीक समय का भी उल्लेख करता है, जिससे इस पर संदेह करने की गुंजाईश नहीं रहती है। इसमें स्पष्ट उल्लेख है कि आषाढ़ शुक्ल द्वादसी, मंगलवार के दिन घटी 31 और पल 28 के समय जगन्नाथ की मृत्यु हुई थी।

यह शिलालेख, जग्गू की मृत्यु कैसे हुई ? इस विषय पर भी प्रश्न चिन्ह लगाता है। सर्वथा माना जाता है कि उसकी सामान्य मृत्यु हुई थी। परंतु शिलालेख पर उत्कीर्ण घोड़े के प्रतीक (सिंबॉलिज्म) को देखें तो उसका आगे का एक पैर हवा में उठा हुआ है जिसका तात्पर्य है कि योद्धा युद्ध में घायल हुआ था और इसी वजह से आगे चलकर उसकी मृत्यु हुई होगी। जैसा कि अनेक ग्रन्थों में उल्लेखित है कि मुहणोत सवाईराम ने जब जगन्नाथ का स्थान ले लिया तब जगन्नाथ जोधपुर में नहीं रुका और मेड़ता चला गया। कुछ समय बाद जब महाराजा विजयसिंह विवाह के लिए बूंदी गए तब जगन्नाथ को साथ ले गए थे, वहां पर भी लोगों ने उसके विरुद्ध महाराजा के कान भरे जिससे दोनों में मनमुटाव अधिक बढ़ गया। विवाह से लौटने के बाद विजयसिंह ने मेड़ता जाकर धायभाई से सरायचा तथा *खासा* घोड़े मंगवा लिए और 12 *वारगीर* और 2 *खासा* घोड़े ही उसके पास छोड़े, साथ ही यह भी हुक्म दिया गया कि जो भी सरदार धायभाई के डेरे (शिविर) जायेगा उसके गाँव जब्त कर लिए जायेंगे।[25] महाराजा के इस बर्ताव को स्वाभिमानी जगन्नाथ सहन नहीं कर सका, और अपने भीतर इस अपमान को दबाकर रखने से बीमारी से ग्रस्त हो गया, जिसके चलते उसकी मृत्यु हो गयी। परन्तु उसकी मृत्यु बीमारी से थी या किसी युद्ध के दौरान घाव लगने के बाद हुई, यह संदेहास्पद है। इसके लिए कुछ और स्रोतों की आवश्यकता होगी।

इस शिलालेख की अन्य विशेषताओं की बात करें तो हम पाते है कि, यह शिलालेख संगमरमर के पत्थर पर उत्कीर्ण है, जिस पर एक योद्धा अश्वारुढ एवं सम्मुख छह स्त्रियाँ खड़ी मुद्रा में तथा एक स्त्री अश्व के पीछे हाथ में चंवर लिए हुए है। अश्व के पीछे उत्कीर्ण स्त्री ठकुरानी चौहान जी (जोधपुर) है, जो जगन्नाथ की धर्मपत्नी है तथा सम्मुख खड़ी छह स्त्रियों में प्रथम दो स्त्रियाँ क्रमश: खवास अनूपराय (मेड़ता के सेठ की पुत्री) एवं पड़दायत गुणभानीजी है। ये दोनों स्त्रियाँ

हाथ जोड़ने की मुद्रा में खड़ी है, तथा गले में कई आभूषण, हाथों में कड़े एवं चूड़ीयाँ धारण कर रखी है। इनकी ओढ़नी भी आकर्षक है, जिसका पल्लू भी आगे की ओर बना हुआ है। इनकी वेशभूषा इन्हें अन्य समकक्ष चारों स्त्रियों से भिन्नता प्रदान करती है शेष चार स्त्रियाँ वाद्ययंत्रों सहित गायणियों के रूप में उत्कीर्ण हैं।



इन स्त्रियों के हाथों में वीणा, रावणहत्था, मंजीरे तथा ढोलक आदि वाद्ययंत्र सुसज्जित है। संभवत: शिलालेख के अनुसार यह नागौर की चार गायणियाँ यथा– गुणरूपजी, रूपरसजी, सुग्यानरायजी, तथा चंद सोभाजी है। किसी राजनीतिक छवि वाले पुरुष के साथ गायणीयों का सती होना एक विशेष एवं अभूतपूर्व घटना है। इसके अतिरिक्त इसमें ऐतिहासिक पक्ष को देखे तो पाते है कि धायभाई जगन्नाथ का इन गायणियों के साथ इस तरह के अन्तरंग सम्बन्ध थे कि वे इसके पीछे सती भी हुई।

धायभाई जगन्नाथ का मृत्यु स्मारक (छतरी) एवं शिलालेख की प्रतिष्ठा वि.सं. 1854 के फाल्गुन माह की कृष्ण पंचमी, सोमवार अर्थात ईस्वी सन् 1798 की 5 फरवरी के दिन, जो कि धायभाई की मृत्यु के 33 वर्ष 8 माह बाद हुई थी। इसकी देरी का कारण अंतिम समय में धायभाई का सामाजिक अपमान रहा होगा। तभी

उसके परिवार के सदस्य उसका स्मारक (छतरी) बनाने का साहस नहीं कर पाए और अंततः महाराजा भीमसिंह के शासनकाल के दौरान यह मृत्यु स्मारक प्रतिष्ठापित हुआ।

निष्कर्ष

इतिहास लेखन में ख्यात साहित्य का स्थान महत्वपूर्ण है, किंतु इसे अकाट्य प्रमाणिक नहीं माना जा सकता। ख्यातें, तवारिखें एवं अन्य समकालीन ग्रंथों का लेखन उस काल विशेष की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित होता था। लेखकों के पूर्वाग्रह, राजदरबारों का प्रभाव, तथा किंवदंतियों का समावेश, ऐतिहासिक तथ्यों की प्रामाणिकता पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं। इसलिए इतिहासवेत्ता को एकल स्रोत पर निर्भर न रहकर, विभिन्न समकालीन स्रोतों, विशेषकर पुरातात्त्विक प्रमाणों, शिलालेखों, और अन्य दस्तावेजी साक्ष्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना आवश्यक है।

प्रस्तुत आलेख में धायभाई जगन्नाथ की मृत्यु से संबंधित तथ्यों की पुनर्व्याख्या की गई है। जहाँ पूर्व ख्यातों और अन्य ग्रंथों में उसकी मृत्यु श्रावण मास में होना बताया गया, वहीं एक अप्रकाशित शिलालेख, जो रूण गाँव (मेड़ता) में स्थित है, स्पष्ट रूप से आषाढ़ शुक्ल द्वादशी (10 जुलाई 1764 ई.) को उसकी मृत्यु का सटीक समय दर्शाता है। यह शिलालेख जगन्नाथ की मृत्यु को केवल प्राकृतिक घटना न मानकर, एक युद्ध के दौरान हुई क्षति से जोड़ता है।

यह अध्ययन यह सिद्ध करता है कि ऐतिहासिक घटनाओं की प्रमाणिकता सुनिश्चित करने हेतु विभिन्न स्रोतों की आलोचनात्मक समीक्षा आवश्यक है। इससे न केवल ऐतिहासिक तथ्यों की सटीकता बढ़ती है, बल्कि इतिहास लेखन अधिक प्रामाणिक और तथ्यात्मक बनता है।

सन्दर्भ

1. जे.एन. सरकार, *फॉल ऑफ द मुग़ल एम्पायर,* भाग-2, एम.सी. सरकार एंड संस लिमिटेड, कलकत्ता, 1950, पृ. 175-76, इस ग्रन्थ में युद्ध का पूर्ण वृतांत दिया हुआ है परन्तु युद्ध की तिथि भिन्न है।
2. सिंढायच दयालदास, *दयालदास की ख्यात,* भाग-2, संपा. दशरथ शर्मा, अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर, 1948, पृ. 78-79

3. यह संधि जोधपुर के सिंघवी फतेहचंद एवं देवीसिंह महासिन्होत के प्रयासों से संपन्न हुई थी।
4. श्यामलदास, *वीर विनोद,* भाग-2, जोधपुर, 2007, पृ. 853; जे.एन. सरकार, *फॉल ऑफ द मुग़ल एम्पायर,* भाग-2, पृ. 188
5. जी.आर. परिहार, *मराठा-मारवाड़ सम्बन्ध,* (1724-1843 ई.), जयपुर, 1977, पृ. 211
6. *सनद परवाना बही,* नं. 12, वि.सं. 1827/1772 ई., पृ. 30एफ-2, जोधपुर रिकॉर्ड्स, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर
7. जी.आर. परिहार, पूर्वोक्त, पृ. 211; *दफ्तर हजूरी बही,* नं. 1, वि.सं. 1810/1753 ई., जोधपुर रिकॉर्ड्स के आषाढ़ माह में पूरबियों की 6 विरादरियों को वेतन स्वरूप 301 रुपए दिए गए थे।
8. मुसाहिब पद की नियुक्ति सर्वप्रथम महाराजा बख्तसिंह के समय हुई। यह शासक का निजी एवं मुख्य सलाहकार होता था। यहाँ तक की राज्य के दीवान व बख्शी भी इसकी सलाह से कार्य करते थे।
9. ए.एच. निजामी तथा आर.एस. खींची, *सर्वे ऑफ खींची चौहान हिस्ट्री,* जोधपुर, 1990, पृ. 402, 405
10. *सनद परवाना बही,* नं. 15, वि.सं. 1832/1775 ई., पृ. 95एफ-1
11. महाराजा विजयसिंह की स्थायी सेना में प्रारम्भ में 2000 सैनिक थे परन्तु 1767 ई. में नागौर के पट्टायत जब इसमें सम्मिलित हुए तब इसकी संख्या 5000 तक पहुँच गई थी।- *अर्जी बही,* नं. 4, वि.सं. 1824/1767 ई., जोधपुर रिकॉर्ड्स, पृ. 275एफ-1-2, जोधपुर रिकॉर्ड्स
12. *जोधपुर राज्य की ख्यात,* जिल्द-3, पृ. 13-16
13. धायभाई का प्रभाव 1764 ई. तक जस का तस बना रहा।
14. जी.एच. ओझा, *जोधपुर राज्य का इतिहास,* भाग-2, अजमेर, 1941, पृ. 709
15. श्यामलदास, *वीर विनोद,* भाग-2, पृ. 855 जबकि 'जोधपुर राज्य का इतिहास' में उल्लेखित है कि इसने 3 वर्ष बाद अपना शरीर त्यागा था- पृ. 710
16. वही, पृ. 855

17. यहाँ तक कि वे उसकी मृत्यु होने पर सती भी हुई।

18. विश्वेश्वर नाथ रेऊ के अनुसार जग्गू ने मेड़ता के एक व्यापारी की लड़की को अपनी उपपत्नी बना लिया था और उसे प्रसन्न रखने के लिए राजकीय द्रव्य का बहुत सा भाग खर्च कर दिया करता था। – विश्वेश्वर नाथ रेऊ, *मारवाड़ का इतिहास,* भाग प्रथम, आर्कियोलॉजिकल डिपार्टमेंट, जोधपुर, 1938, पृ. 380; जी.एच. ओझा, *जोधपुर राज्य का इतिहास,* भाग–2, पृ. 716

19. *महाराजा श्री विजयसिंहजी री ख्यात,* संपा. ब्रजेश कुमार सिंह, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, 1997, पृ. 69

20. जी.एच. ओझा, *जोधपुर राज्य का इतिहास,* भाग 2, पृ. 717

21. *जोधपुर राज्य की ख्यात,* जिल्द 3, पृ. 39–40

22. विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने जगन्नाथ की मृत्यु वि.सं. 1821 अर्थात् 1764 ई. के अगस्त महिने में होना लिखा है– वी.एन. रेऊ, *मारवाड़ का इतिहास,* भाग–1, पृ. 380

23. श्यामलदास, *वीर विनोद,* भाग 2, पृ. 855

24. जोशी तिलोकचंद, *मारवाड़ री ख्यात,* संपा. हुकम सिंह भाटी, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर, 2000, पृ. 7

25. *महाराजा श्री विजयसिंहजी री ख्यात,* पृ. 70

टैगोर फेलो
राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली